ARYAVART SHODH VIKASH PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO. 263-266
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

संस्कृत साहित्य में कवियों की राष्ट्रीय प्रवृत्तियाँ

डॉ0 विनोद कुमार पाण्डेय

एसोसिएट प्रोफेसर– संस्कृत विभाग, के0जी0के0 (पी0जी0) कॉलेज, मुरादाबाद, (उ0प्र0), भारत

संस्कृत काव्य धाराऋग्वेद से लेकर अद्यतन युग तक सतत प्रवहमान है। यह सहस्रों वर्ष पूर्व प्रवाहित य स्रोतस्विनी अपनी जीवनी शक्ति और अमृत रस से आज भी सहृदयों को आह्लादित करने में समर्थ है, क्योंकि इसमें है, चिरन्तनता के साथ ही विकासशीलता अर्थात् युगारूप परर्नतनों और प्रवृत्तियों को आत्मसात् करने की शक्ति एवं जन–कल्याण का शिव–संकल्प। प्रारम्भ में मनुष्य की भक्ति तथा ममत्व की भावना जन्म भूमि तक सीमित थी, किन्तु शैनः शनैः उसका विस्तार राज्य की सीमा शनैः शनैः में बढ़ा शिक्षा के प्रसार तथा यातायात की सुविधाओं के साथ मनुष्य का परिचय एक बड़े भूखण्ड के अन्य भागों से भी हुआ। आज देशभक्ति की भावना जिस विस्तृत रूप में संसार के सम्मुख आयी है, वैसी इसके पहले कभी न थी। जन्मभूमि का अर्थ स्वदेश है, जिसके प्रति रागात्मक वृत्ति सजग रहती हैं

जार्ज बनार्डशॉ ने कहा है कि– ''राष्ट्रभक्ति में ऐसा दृढ़ विश्वास होता है जिस देश में जन्म हुआ है वही देश संसार में श्रेष्ठ है। डॉ0 राधाकुमुद मुखर्जी के मत में– ''भारत में जन्मभूमि के प्रतिभक्ति तथा स्वदेश की भावना वैदिक काल से पायी जाती है।'' ''जननी जन्मभूमिश्चस्वर्गादपि गरीयसी''– जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान है। विष्णु पुराण में भारत–भूमि के प्रति महान भवना मिलती है– **गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ते भार भूमि भागे। भारत स्वर्गापवर्गास्पद मार्गभूते भवन्ति भूयः पुरूषा सुख्त्वात्।**

देश की वन्दना, गौरवगान, जयजयकार, जागरण और अभिमान के गान देशभक्ति के विभिन्न पक्ष हैं। राष्ट्र अथवा राष्ट्रवाद के अभाव में भी देश भक्ति वर्तमान रह सकती है। बर्न की परिभाषा पर भी – भारत की राष्ट्रीयता तथा राष्ट्रवाद पर खरी उतरती है। अतः भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व स्वतंत्रता को ध्येय बनाकर राष्ट्रवाद का पूर्व विकास हो गया था। राजाराम मोहन राय, दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस आदि के अथक प्रयत्नों से तथा पाश्चात्य सभ्यता एवं संघर्ष के फलस्वरूप देश में एक नवीन चेतना का जन्म हुआ जिसे राष्ट्रीयता अथवा राष्ट्रवाद की संज्ञा दी गई।

एक देश ''देश/राष्ट्रीय भावना की संज्ञा से ऊपर उठकर ''राष्ट्र'' की संज्ञा को तभी प्राप्त करता है, जबकि उसके निवासियों में कुछ सामान्य विशेषताओं निवासियों के आधार पर घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। भारत राष्ट्र में भी भारतीय भाषाओं हिन्दी, बांग्ला, मराठी, उडिया, गुजराती, तमिल आदि के साथ ही देववाणी में नाना विधाओं में नवसाविय का सर्जन हुआ। नव साहित्य पौराणिक राजा–रानियों से हटकर आचार्य शंकर, विवेकानन्द, लोकमान्य तिलक, महात्मागाँधी जैसे लोकनायकों को नायक बनाकर संस्कृत भाषा में अनेक महाकाव्यों की रचना हुई।19वीं शताब्दी के पराधीन भारत में भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन राष्ट्र भक्ति और सामाजिक अर्वाचीन संस्कृत काव्य के मुख्य विषय थे।

स्वतन्त्रता के पश्चात् सामाजिक कुरीतियों, साम्प्रदायिक दंगों, औद्योगीकरण वैज्ञानिक प्रगति की विभीषका, नैतिक पतन, निर्धन और धनवान के मध्य कढती खाई, वर्गभेद, पूँजीवाद, भष्ट्राचार, आतंकवाद शोषण, अत्याचार, दहेज हत्या नारी सशक्तिकरण, व्यक्तिवाद स्वप्नभंग की पीड़ा, हताशा और अवसाद, विश्वशान्ति आदि विषयों को केन्द्र बनाकर असंख्य स्वनाएँ हुई।

अर्वाचीन संस्कृत रचनाकारों में– अप्पाशास्त्री राशिवडेकर, पण्डिता क्षमाराव, भट्टमथुरानाथ शास्त्री, वेड़क्टराघवन, दत्त दीनेशचन्द, महालिड़ग् शास्त्री, रतिनाथ झा, श्रीधर भास्कर वर्णेकर, डॉ0 सत्यव्रत शास्त्री, रामकरण शर्मा, जगन्नाथ पाठक, डॉ0 रेवाप्रसाद द्विवेदी, डॉ0 श्रीनिवासरथ प्रभात शास्त्री, डॉ0 अभिराज राजेन्द मिश्र, डॉ0 राधा वल्लभ त्रिपाठी, डॉ0 रास बिहारी बोस, डॉ0 पुष्पा दीक्षित, कु0 कमला पाण्डेय, डॉ0 हर्षदेव माधव, डॉ0 इच्छाराम द्विवेदी 'प्रणव', जर्नादन पाण्डेय 'मणि' आदि प्रमुख सशक्त हस्ताक्षर है, जिन्होंने विषय एवं विधा की दृष्टि से नव साहित्य का सजृन करते हुए अमृतावाक् के कोश को समृद्ध किया है। आधुनिक कवियों में अप्पाशास्त्री राशिवउेकर, पण्डिता क्षमाराव, डॉ0 पुष्पा दीक्षित, जानकी वल्लभ शास्त्री, श्री निवासरथ आदि कवियों ने अपनी कविताओं के मायध्यम से राष्ट्र के प्रति जागरूकता का संदेश दिया है। अपने राष्ट्र की परतन्त्रता एवं स्वतन्तत्रता के मध्य के समय इन कवियों द्वारा लिखित कविताएँ एवं पत्रिकाएं ही हमारे देश के लोगों के हथियार बनती थी जिन्हें पढ़कर या सुनकर ही देश–प्रेम की भावना जागृत हाती थी। संस्कृत काव्य परम्परा में नवयुग के प्रवर्तक बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न महान राष्ट्रभक्त श्री अप्पाशास्त्री राशिवडेकर जी का जन्म महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिले के राशिवडेकर ग्राम में 2 नबम्बर 1873 ई0 में हुआ था। इनके पिता सदाशिव शास्त्री अपने समय के विख्यात वैदिक पण्डित ज्योतिषी एवं कर्मकाण्ड के ज्ञाता थे। संस्कृतमय परवेश में जन्में नैसर्गिक कवि अप्पाशास्त्री ने आठ वर्ष की बाल्यवस्था से ही देवाणी में

अनुरूपी लेखक

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

काव्य रचना कर दी थी।

इनका जन्म एक ऐसे युग में हुआ, जब यह भारत राष्ट्र ब्रिटिश साम्राज्य का गुलाम था। 1857 की क्रांति ने असफल होते हुए भी देशवासियों के मन में स्वतन्त्रता की ललक जगाई थी।राष्ट्रभक्त अपनी मातृभूमि को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए तन–मन–धन अर्पित करने के लिए तत्पर थे। इन्होंने सरकारी नौकरी ठुकराकर, एक स्कूल में अध्यापक के रूप में अपने कर्ममय जीवन का प्रारम्भ किया। उनकी पत्रिका "सुन्ततवादिनी" लोकमान्य तिलक की "केसरी" के समान ही लोक प्रिय हुई। प्रखर राष्ट्रवादी विचारों के कारण संस्कृत चन्द्रिका ब्रिटिश शासन की कोपभाजन बनी, अन्ततः इसे बंद कर देना पड़ा। प०जरबद्धः शुकः कवि की एक उत्तम रचना है, जिसमे पराधीन भारत के जन–मन की पीड़ा को मूर्त रूप दिया गया है।

"शुक सुवर्णमयस्तव प०जरो न खलु प०जर एष विभव्यताम्। मुखमिदं ननु हेमशलाकिकारदनमालि मृतेरतिभीषणम्।।3।।"

अपने सोने के पि०जरे को पि०जरा मत समझो। यह तो सोने की सलाखों रूपी दाँतों वाला मृत्यु का अतिभीषण मुख है।

"द्वाधिक कठोरजङ्घनी जरठा त्वदीया त्वां चिन्तयत्यनुदिंन परिहीचतऽगैः अन्तं निषेव्य परदत्तमिदं पुनरूत्वं स्वप्नेऽपि न स्मरति तां प्रमर्दैकम्न ।।4।।"

उपरोक्त पदों से कवि के जीवन दर्शन पर गीता की स्पष्ट छाप परिलक्षित होती है जिसमें कहा गया है–

"स्वधर्मे निधनं श्रेयः पर धर्मों भयावहः।"

स्वधर्मे का पालन और स्वतन्त्रता प्राप्ति ही कवि के जीवन का लक्ष्य है। **"य इह बन्धुजनेन निषेव्यते सममसौ विभवो विभवो मतः। यमिह सेवस एकल एव स प्रिय पतड़ग्म कि विभवो भवेत्।।8।।"**

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त को यह रचना इतनी अच्छी लगी कि उन्होंने इसका हिन्दी भाषा में पद्यानुवाद किया जो प्रतिष्ठित पत्रिका "सरस्वती" के अगस्त 1911 के अंक में प्रकाशित हुआ। अप्पाशास्त्री की काव्यरचनाओं में युगबोध, राजनैतिक चेतना, राष्ट्रप्रेम, सामाजिक यथार्थ और विसंगतियों पर व्यंग्य स्पष्ट प्रतिविम्बित होता है।

आकर्ण्य कि मम वंचास्यथ कीर च०चूं धूनोषि प०जरमिमं प्रतिभेविन्तकायः। वैफल्मेधति न केवलमेष यत्नो लिर्मूलयेदपि तु च०चुमपि त्वदीयाम्।।7।।

कवि ने यहाँ ब्रिटिश शासन द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों की ओर संकेत किया है। ब्रिटिश साम्राज्य के क्रूर दमन चक्र से उत्पन्न वेदना और लक्ष्य प्राप्ति कवि ह्रदय की हताशा इस अंतिम पद्य में अभिव्यक्त हुई है।

'पण्डिता' उपाधि से विभूषित क्षमाराव का जन्म 4 जुलाई 1890 में महाराष्ट्र के सामन्तवादी जिले के बम्बोली नाम ग्राम में हुआ था। इनके पिता शंकर पाण्डुरंग पण्डित संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान तथा पूना के सुविख्यात डेकन कॉलेज में प्राध्यापक थे। प्रतिकूल परिस्थितियों के होते हुए भी मेधाविनी क्षमा 10 वर्ष की आयु से ही संस्कृत और अंग्रेजी में कविताएँ लिखने लगी थी। कुछ समय पश्चात् वे अपने पितामह रामचन्द्रनायक के पास बम्बई में रहने लगी, वहाँ गंदी बस्ती में रहते हुए उन्होंने गरीबों के दुख दैन्य को तीव्रता से अनुभव किया जो अपने यथार्थ रूप में उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त हुआ है। पति के साथ यूरोप भ्रमण के दौरान महान प्राच्य विद्या–विशारद सिल्वाँ लेव्ही का उन्हें आर्शीवाद मिला। संस्कृत में लिखने की प्रेरणा उन्हें अंग्रेजी के प्रसिद्ध साहित्यकार समरसेट मॉम ने दी। गाँधी जी के स्वाधीनता संग्राम से प्रभावित होकर उन्होंने इस धर्म युद्ध पर नई गीता "सत्याग्रह गीता" लिखी जो भारत में प्रतिबन्धित होने के कारण 1937 में पेरिस से प्रकाशित अन्त्जोहदार हुई। उन्होंने "अन्त्जोद्धारः" जोकि सत्याग्रह गीता के द्वितीय अध्याय का अंश रूप है। जब गाँधी जी दक्षिण अफ्रीका से भारत लोटे और उसके पश्चात् जब उन्होंने पराधीन भारत का भ्रमण किया तब उन्होंने दीन–दुखी–निर्धन अन्त्यजों की दुरवस्थाको देखकर उनके प्रति समाज के भेद–भाव को समाप्त करने उनके उद्धार एवं सामाजिक पुनर्जागरण का संकल्प लेते हैं। दक्षिण भारत की यात्रा के प्रसंग् में घटित एक मार्मिक घटना का वर्णन प्रस्तुत शीर्षक "अन्त्यजोद्धारः" के अन्तर्गत किया गया है।

अमर्धैला च तां पश्चयन्नुद्विग्नोऽभूद् दयाकुलः। मालिन्यं ते कुतो भद्रे इति पप्रच्छा सादरम्।।3।।

पण्डिता यहाँ अस्वच्छा नारी को देखकर दया से व्याकुल और उद्विग्न होकर गाँधीजी ने आदर के साथ उससे पूछा–हे भद्रे! तुम ऐसी मलिन क्यों रहती हो?

"मद्वदर्धपरिच्छन्ना जनानां सन्ति कोटयः। एकाहाराश्च कृच्छेण धारयन्तो निजानसून्।।8।।"

वह मलिन स्त्री यहाँ गाँधीजी को अपनी और अपने जैसे करोड़ों लोगों की निर्धनता के बारे में बताते हुए कह रही है कि मेरे जैसे करोड़ों लोग जो एक समय भोजन करते हैं और बड़ी कठिनाई से प्राण धारण करते हैं।

"अहो दशा दुरन्तेय नोपेक्ष्या मानुषात्मभिः। बदिष्कारो डन्त्यजानां हि भारत स्यैव ला०छानम्।।8।।"

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-7, No.-I, Issues-VIII YEAR- June-2017

यहाँ अन्त्यजों के बहिष्कार का वर्णन है, जिसे गाँधीजी ने गलत कताया है कहा है कि उनकी इस दशा की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। अन्त्यजों का बहिष्कार ही भारत का कल१ है।

"शूद्रों वा ब्राह्मणों वापि क्षत्रियों वा कृषीवलः। देवदृष्टया समा सर्वे विकृतिस्तु नरोद्भवा।।9।।
भेदः कृतो मनुष्येण न धात्रा समदर्शिना। शील चिद सुजातस्य न जातिर्न च जीविका।।20।।"

शुद्र हो या ब्राह्मण क्षत्रिय हो या किसान ईश्वर की दष्टि में सभी समान हैं। ऊँच–नीच का विकार मनुष्य का बनाया हुआ है। समदर्शी विधाता के द्वारा नहीं। सुजात मनुष्य का जाति या जीविका नहीं।

क्षमाराव ने हिन्दी की भक्त कवि मीरा के जीवन पर 'मीरा लहरी' नामक खण्डकाव्य, गाँधीजी को केन्द्र बनाकर रची गई स्वाधीनता संग्राम के काव्यात्मक इतिहास की अंतिम कड़ी 'स्वराज विजय महाकाव्यम्' जो कि 1944 पूर्ण हुई। आचार्य कवि राजशेखर की इस उक्ति को सार्थक किया है– "प्रतिभा स्त्री पुरूष का भेद नहीं करती। अर्वाचीन संस्कृत काव्य को नवीन प्रयोगों से समृद्ध बनाने वाले श्री जानकीवल्लभ शास्त्री का जन्म विहार में गया जिले के मैगरा नामक ग्राम में हुआ था। आप बचपन से ही मेधावी छात्र रहे है, अठठारह वर्ष की अल्पायु में आपने 'साहित्याचार्य' की उपाधि प्राप्त की। इन्होंने हिन्दी और संस्कृत दोनों ही भाषाओं के साहित्यकोश की वृद्धि अपनी रचनाओं से की हैं। 19 वर्ष की आयु में 1935 में उनकी संस्कृत काव्य रचनाओं का प्रथम संकलन 'काकली' प्रकाशित हुआ था। जानकी वल्लभ शास्त्री की रचनाएँ भाव और शिल्प के इन्द्रधनुषी रंगो को प्रस्तुत करती है।

"आधाय धवल धारमुरसि तारहारवत् गंगातरंगमंगशिव भांति भारतम्।"

यहाँ भारत देश को गंगा की तरघीं से शोभित शिव की भाँति प्रतीत होता है। उज्जवल स्थूल (तार) मुक्ताओं से रचित हार के समान गघीं की धवल शुभ्रधारा को अपने वक्स्थल पर यह भारत देश धारण करता है।

"दूर्वापि चन्दनायते काशोऽपि कुशसयः, उच्चावचं परीक्ष्य पुरो याति भारतम्।"

यहाँ शास्त्री जी दूर्वा से भारत में ऊँच–नीच की परीक्षा करके आगे बढ़ रहा है। उनके अनुसार दूर्वा भी चन्दन बन जाती है, काश भी कुश के समान हो जाता तो ऊँच–नीच का भेद समाप्त हो जाता है।

"अग्रेसर मनो निधाय न्यस्यते पदम् जागर्ति जनः प्रेक्षते, प्रीणाति भारतम्।"

आज का भारत मन को एकाग्र करके आगे की ओर कदम बढ़ा रहा है। लोग जाग रहे हैं, देख रहे हैं। भारत भूमि प्रसन्न हो रही है।

प्रगतिवादी कवियोंमें अग्रगण्य श्री निवास रथ का जन्म 1 नवम्बर 1933 को उड़िसा के पावन तीर्थ जन्नाथपुरी में संस्कृतमय परिवेश में हुआ था। उनके पिता संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। उन्होंने पारम्परिक पद्धति से संस्कृत का अध्ययन अपने पिता श्री से ही किया था। वे बाल्यावस्था से ही श्लोक–रचना करने लगे थे। पारम्पररिक शास्त्रीय ज्ञान एवं आधुनिक भावबोधः दोनों का मणि–क०चन योग उनके व्यक्तित्व की विशेषता हैं। श्री निवास रथ का कर्ममय जीवन आध्यापकीय दायित्वों से प्रारम्भ हुआ। संस्कृत नाटक हो या काव्यः, उनके हिन्दी अनुवाद इतने जीवन्त होते थे कि उसकी प्रस्तुति के अवसर पर दर्शक और अभिनेता के ह्रदय एक ही भावसूत्र में गुँथ जाते थे। श्री निवास रथ की काव्य रचनाओं में 'पुरूषार्थ संहिता', 'नवा कविता', 'विपत्रिता', 'तदेव गगनं सैव धरा' आदि नवीन भावबोध को अभिव्यक्त करने वाली उत्तम रचनाएँ हैं। देववाणी के प्रति अपने अवदान के लिए श्रीनिवास रथ 'राष्ट्रपति सम्मान' से सम्मानित हुये हैं।

वे अपनी रचनाओं से उनके समय को प्रतिध्वनित करते हैं बल्कि अपने समय के प्रति प्रतिबद्ध हैं, अपितु उसकी जड़ता और स्थितिवादी शक्तियों के विरूद्ध भी हैं। उन्होंने अपने समय की ज्वलंत समस्याओं को अपनी कविताओं में रेखांकित किया है।

"विपत्रितेयं जीवनलतिका केवल कुटिल कण्टकाकुलिता दूरे कुसुम कथा।। सूर्ये तपति तमिस्रा भवति प्रभवति नयनमयथा।। किमित सपदि नववभूविशसनं दैनन्दिनी प्रथा।" विज्ञाननौका समानीयते ज्ञानगंगा विलुप्तेति नालोक्यते।"

विश्व में बढ़ते हुये आतंकवाद और हिंसावृत्ति के प्रति गहन चिन्ता 'पुरूषार्थ संहिता' शीषर्क स्चना में देखी जा सकती है।

सविता ताम्यति धरणी पिदलति ग्रन्थगता गुरूवाणी रोदिति हिंसाजर्जरिता। रेणुरूषिता व्रणविरूपिता विलुठति भुवि पुरूषार्थ संहिता।।"

"तदेव गगनं सैवधरा" शीर्षक रचना में जहाँ एक और परिवर्तन की आलोचना है, वहीं दूसरी ओर नवयुगोचित मनुजसंहिता का स्वाग भी हैं।

श्री निवास रथ ने परम्परा से बिना कटे नई जीवन–स्थितियों एवं अनुभूतियों को अव्यिक्त करने में समर्थ भाषा की रचना की है। संस्कृत गीत के क्षेत्र में उन्होंने एक नूतन शैली को जन्म दिया है।

अर्वाचीन संस्कृत कवियों में एक सम्मानीय नाम श्री रमाकान्त शुक्ल जो कि ऐसे कवि हैं जिन्होंने काव्य में भारत भूमि अर्थात्

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14

राष्ट्र के प्रति अपनी भावनाएँ व्यक्त की जिससे देश की जनता में देश के प्रति सम्मान बढ़ा है और उन्हें अपनी स्वतन्त्रता का ज्ञान प्राप्त हुआ है। कविवर का जन्म 24/12/1940 ई0 में उत्तर प्रदेश के खुर्जा में हुआ था, आपके पिता महान संस्कृतज्ञ श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल एवम् माता श्रीमती प्रियम्बदा शुक्ल है। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा खुर्जा स्थित विद्यालय एवम् महाविद्यालय में हुई। आपके द्वारा रचित काव्य निम्नलिखित हैं– भाति मे भारतम्, जय भारतभूमे, भाति मौरीशसम् भारतजनताहम् सर्वशुक्लोतरा इत्यादि। इसी प्रकार उन्होंने नाटकों का प्रणयन किया है। उनका सम्मान भारतदेश ही नहीं अपितु विदेशों में मॉरीशस, अमेरिका, इटली, यू0के0 में भी विविध समारोह में हुआ है। आपने दूरदर्शन में संस्कृत काव्यपाठ किया और आकाशवाणी में सभी भाषा के कविसम्मेलनों में संस्कृत कवि के रूप, अनुवादकर्त्ता के रूप में सहभागिता की। वर्तमान में "अर्वाचीन संस्कृतस्य' के प्रधान सम्पादकः हैं।

"मई–षड्विंश दिवसादैषमो मासद्वयं यावत्। अघोषित–पाक–रण–जयिनो' भिवन्द्याः कारगिलवीराः।।2।। 26/5/1999 से 26/07/1999 पर्यन्त कारगिल क्षेत्र में प्रचलित पाकिस्तान से अघोषित युद्ध हुआ जिसमें हमारे अभिनन्दीय वीर कारगिल में विक्षय हुए। **"अकस्माव्राविशन्नस्मद्गुहे गूढ प्रवेशा थे। स्वदेशात्तान् बहिष्कर्तु प्रचेलुः कारगिलवीराः।।3।।"**

हमारे गृह में उन लोगों (आतंकियों) ने अकस्मात प्रवेश किया लेकिन हमारे पराक्रमी वीरों ने उन्हें स्वदेश से बहिष्कृत कर बाहर निकाल दिया। उसी प्रकार 'भारतस्य विजयोऽयम्' नामक कविता में परतन्त्रता से स्वतन्त्र हुए भारत की छवि का वर्णन है। **क्रुद्ध हिंसाबलं जितं किल सत्याहिंसाबलतः। आङ.ग्लशासनंखलूच्चाटिलं तंभारतस्य विजयोऽयम्।। ।।** सत्य और अहिंसा के बल पर क्रोधी, हिंसक, बलशाली अंग्रेजों के शासन को जीत लिया और उन्हें भारत छोड़ना पड़ा ऐसे भारत की विजय हो। **"मौं चिन्तां कुरू रमाकान्त! सागरवक्षसि सोत्साहम्। आत्मरक्षणं विद्धति वीराः, भारतस्य विजयोऽयम्।।7।।** कवि स्वयं से आत्म चिन्तन कर कहता है कि चिन्ता मत करो क्योंकि हमारे वीर नभ, जल, थल तीनों जगह से हमारी रक्षा के लिए सदैव तत्पर हैं इसलिए ऐसे भारत देश की सदा विजय हो।

"को नु देश गरिमाणमीहते को न भारत–सुखनि कार्धैति। को रिरषिपति राष्ट्रियैकताम, भारतस्य जनता समीक्षते।।1।।

यहाँ भारत की जनता समीक्षा कर रही है कि भारत की गरिमा, उसके सुख आकांक्षा, उसकी राष्ट्रीय एकता की रक्षा करना चाहती है। शुक्लजी की कविताओं को पढ़कर भारत जनता देश के हर कार्य के लिए जाग्रत हुई है। ये वर्तमान परिवेश को ध्यान में रखकर लिखी गई।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ0 सुधीन्द्र : हिन्दी कविता में युगान्तर : पृ 236, ब्रह्मपुराण (10/25)
2. नवस्पन्द : प०जर बद्ध शुक : श्लोक 131
3. नवस्पन्द : अन्त्यजोद्धारः; (श्लोक 8)
4. वही (श्लोक 10)
5. नवस्पन्द : अन्त्यजोद्धारः; (श्लोक 20)
6. नवस्पन्द : भारतम् : (श्लोक 2)
7. नवस्पन्द – भारतम् : (श्लोक 5)
8. वही (श्लोक 6)
9. विपत्रिता
10. वितदैव गगनं सैवधरा
11. वितदैव गगनं सर्वेधरा
12. सर्व शक्लोत्तराः प्रगमया कारगिलवीराः,
13. सर्वशुक्लोतरा : प्रणम्या : कार्यगलवीरा; (3)
14. सर्वशुक्लोतरा : भारतरूप विजवाडयम् (1)
15. वही (7)
16. सर्वशुक्लोतरा : भारतरूप जनता समीक्षते (1)

*****

ASVS Society Reg. No. 561/2013-14